Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies,
Online ISSN 2278-8808, SJIF 2016 = 6.17, www.srjis.com
UGC Approved Sr. No.45269, JULY-AUG 2017, VOL- 4/35

vkRek dk Lo#i

iYyoh flag, **Ph. D.**
वरिष्ठ प्रवक्ता (संस्कृत), के.आर.महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मथुरा

Scholarly Research Journal's is licensed Based on a work at www.srjis.com

भारतीय दार्शनिक चिन्तनधारा को परम्परा में जिस प्रकार अपौरुषेय वेदों का अद्भुत और महत्वपूर्ण स्थान रहा है। उसी प्रकार समग्र आध्यात्मिक, दार्शनिक और सामाजिक चिन्तन की पृष्ठभूमि में ब्राह्मण ग्रन्थों एवं उपनिषदों का महत्वपूर्ण स्थान है। भारतीय मनिषियों ने अपने क्रियात्मक अनुभूतियों के द्वारा जिस निर्मल ज्ञान की पुण्यधारा प्रवाहित की है उससे न केवल भारतीय साहित्य अपितु सम्पूर्ण विश्वसाहित्य की भी वृद्धि में जो योगदान दिया है वह अपरिमेय है। यही कारण है कि विभिन्न साहित्य इससे अनुप्राणीत हुए हैं अर्थात् उपनिषद् सबसे प्राचीन साहित्य के रुप में माना जाता है इसे वेदान्त भी कहा जाता है। इसी बात की पुष्टि आचार्य सदानन्द जी ने अपने वेदान्तसार में की है। वे लिखते हैं – ''वेदान्तों नाम उपनिषत्प्रमाणं तदुपकरीणि शारीरिकसूत्रादीनि'' शोपेनहार की यह उक्ति भी बहुत ही महत्वपूर्ण है – In the whole world there is no study so elevating as that of Upanishad. It has been the solace of my life and it will be the solace of my death.

शाब्दिक व्युत्पत्ति की दृष्टि से उपनिषद् शब्द 'उप' और 'नि' उपसर्ग लगाकर सद्लृ धातु से बनाया गया है। सद्लृ धातु का प्रयोग तीन अर्थों में होता है :–

1. विशरण अर्थात् नाश होना
2. गति अर्थात् प्राप्त करना या जानना
3. अवसादन अर्थात् शिथिल होना

इस प्रकार 'उपनिषद्' से यहाँ अभिप्राय है कि इनके अध्ययन से अविद्या का नाश होता है, इनके अध्ययन से ब्रह्म (ज्ञान) की प्राप्ति होती है और सांसारिक दुःख शिथिल होता है। अतः उपनिषद् से मुख्य अभिप्राय तो ब्रह्मविद्या से ही है किन्तु गौण रुप में ब्रह्मविद्या के प्रतिपादक ग्रन्थों को भी उपनिषद् कहा जाता है। उपनिषद् शब्द की एक दूसरी व्युप्तत्ति भी है। उसके अनुसार 'उप' और 'नि' उपसर्ग लगाकर 'सद्' धातु से उपनिषद् शब्द बनाया जाता है। इस व्यत्पत्ति का अभिप्राय है 'गुरु के पास बैठना' तथा गुरु के समीप बैठकर रहस्यमय ज्ञान को प्राप्त करना। वस्तुतः ब्रह्म, जीव एवं जगत आदि का वर्णन रहस्यमय ही है। यह रहस्य आत्मा और परमात्मा एवं जगत आदि के वर्णन से ही सम्बन्धित माना जाता है। तात्पर्य हे कि उपनिषद् वह ग्रन्थ है, परमात्मा अथवा सनातन स्वभावयुक्त चैतन्यरुप

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

आत्मा के चिन्तन में प्रेरित करे वही आत्मविद्या का प्रतिपादन करने वाला ग्रन्थ उपनिषद् है। प्रो0 विण्टरनिट्ज के अनुसार तो स्वयं उपनिषद्ों में उपनिषद् का अर्थ रहस्य रुप किया गया है ''इति रहस्यम्' और इति उपनिषद्' के रुप में यह अनेकत्र प्रयुक्त हुआ है। अतः ब्रह्म प्राप्ति के साधनभूत ग्रँन्थ का नाम भी उपनिषद् हुआ अर्थात् 'ब्रह्मसामीप्यं नि निश्चयेन सीदति प्राप्नोति यया सा उपनिषद् अर्थात् जिसके द्वारा ब्रह्मकी समीपता प्राप्त हो उसको उपनिषद् कहते हैं। कठोपनिषद कृष्ण यजुर्वेद के कठ शाखा के अन्तर्गत आता है। इसका दूसरा नाम नचिकेतोपाख्यान भी है।

कठोपनिषद में महान अद्वैत तथ्य का गम्भीर विश्लेषण किया गया है। 'नेहनानास्ति' किञ्चन' इस उपनिषद् का गम्भीर तत्व है।

सांसारिक आवागमन एवं जन्म–मृत्यु के कालचक्र से छुटकारा प्राप्त करना ही मानव जीवन का चरम लक्ष्य है और यह तभी सम्भव है जब जीवात्मा अपने वास्तविक स्वरुप को पहचान ले। वास्तविक स्वरुप पहचान लेने पर जीवात्मा और परमात्मा में किसी भी प्रकार की भिन्नता अवशिष्ट नहीं कर जाती है। दोनों का सम्बन्ध तादात्म्य होकर एकाकारिता का भान होने लगता है। इसके निमित्त आत्मज्ञान अथवा ब्रह्मज्ञान रुपी साधन का आश्रय प्राप्त करना परमावश्यक है क्योंकि साधन के द्वारा ही साध्य की प्राप्ति किया जाना सम्भव है।

त्रिविध तापों अथवा दुःखों आध्यात्मिक आधिदैविक ताप और आधिभौतिक ताप से पूर्वरुपेण छुटकारा प्राप्त कर लेना ही मानव–जीवन का प्रधान उद्देश्य है। सांख्य और न्याय दर्शनकारों ने इसी बात का विश्लेषण निम्नलिखित सूत्रों द्वारा किया है।

'अथ' त्रिविधदुःखात्यन्तनिवृंतिरत्रून्तपुरुषार्थः।

इन तीनों तापों से छुटकारा प्राप्त कर लेने का ही नाम अत्यन्त पुरुषार्थ अथवा मोह है। इस स्थिति और अवस्था को प्राप्त कर लेना ही मानव–जीवन का प्रधानतम उद्देश्य है। इसलिए स्थिति को प्राप्त कर मनुष्य उस परमतत्त्व की आनन्द अनुभूति करता है जिसके लिए वह सदैव प्रयत्नशील रहता है। जीवात्मा सत् और चित् है परमात्मा सत्, चित् तथा आनन्दस्वरुप है। दोनों में मात्र आनन्द का अन्तर है जब जीवात्मा को चिरन्तन आनन्द की अनुभूति होने लगती है तो वह स्वयं को भूल उस आनन्द में विलय हो जाता है। इसी का नाम तन्मयावस्था है और इस अवस्था में लाने का एकमात्र साधन 'आत्मज्ञान'।

कठोपनिषद में यमराज ने नचिकेता क अनेक प्रकार से परीक्षा के बाद उसे आत्मज्ञान का अधिकारी समझा और उपदेश दिया। इस भावना को कठोपनिषद के निम्न वाक्य द्वारा इस भाँति स्पष्ट किया गया है।

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

स त्वं प्रियान्प्रियरुपाश्च कामा न मिथ्यायनचिकेतोऽत्यस्त्राक्षीः।

नेता सृडक की वित्तमयीमवासो, यस्यां मज्जन्ति बहवो मनुष्याः।।

यमराज आत्म तत्व को ग्रहय करने में मनुष्य की असमर्थता को प्रकाशित करते हुए कहते हैं कि

अर्थात् आत्मतत्व का यथासम्भव रुप में वर्णन करने वाला विरले ही पुरुष होता है। आत्म–साक्षात्कार करने वाले अनुभवी आचार्य द्वारा उपदेश प्राप्त करे तद्नुसार मनन एवं निदिध्यासन द्वारा उस आत्मतत्व का साक्षात्कार करने वाला पुरुष भी कोई विरले ही होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि आत्म तत्व का वक्ता, उपदेष्टा साक्षात्कारकर्ता मिलना संसार में कठिन ही है। इस प्रकार यदि साधारण व्यक्ति द्वारा इस ज्ञान के बारे में श्रवण कर लिया जाय और तद्नुसार यदि उसका चिन्तन भी किया जाए तो भी आत्मतत्व सम्बन्धी ज्ञान को लेशमात्र भी नहीं समझ सकता है क्योंकि यह अत्यन्त सूक्ष्म अणु से भी अतिसूक्ष्म है। अतएव वह तर्क का विषय नहीं है।

इस प्रकार बुद्धिरुपी गुहा में स्थित उस आत्मा को अध्यात्म योग के द्वारा जानकर मनुष्य हर्ष–शोक आदि से रहित होकर उस महान आनन्द का अनुभव किया करता है कि जिसके लिए वह निरन्तर प्रयत्नशील था–

तं दुर्दर्शं गूढ़ मनुप्रविष्ट गुहाहितं गरेष्ठम पुराणम्।

अध्यात्मयोगाधिगमेवदेवं मत्वा धीरो हर्ष–शोकौ जहाति।।

इस योग साधना द्वारा मनुष्य हर्ष–शोक से रहित परमानन्द मोक्ष की अनुभूति करता है। नचिकेता से यमाचार्य कहते हैं–

सर्व वेदा यत्पदमामन्ति तपांसि सर्वाणि च यद्दन्ति।

यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्य चरन्ति तन्ते पदं संग्रहेणं ब्रवीभ्योमित्येतत्।।

ओइम् की महत्ता को स्वीकारते यमराज कहते हैं कि जिसका वेदों के द्वारा वर्णन किया गया है, जिसकी प्राप्ति के लिए व्रत एवं तपादिनाना प्रकार के साधन किये जाते हैं वह परमात्मातत्व ओइम ही है। अतः गीता जैसे भावप्रधान एवं रहस्यमय दार्शनिक धर्मग्रन्थ में भी परमात्मा रुप का वर्णन है।

यह ओड.कार ही अत्युत्तम अवलम्बन है। यह आश्रय ही सर्वोपरि है। इस आलम्बन को भली भॉति जानकर साधक ब्रह्मलोक में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करता है। इस प्रकार परमात्मा के ओड़्कार रुप का वर्णन करने के बाद आत्मरुप का वर्णन करते हैं।

न जायतेम्रियेते वा विपश्चिन्नायं कुतश्चिन्नायं वभूव कश्चित्।

अजोनित्यः शाश्वोऽयं पुराणों न हन्यते हन्यमाने शरीर ।

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

अर्थात नित्य, शाश्वत् सदा एक रस रहने वाला और पुरातण है अर्थात क्षय एवं वृद्धि से रहित है। शरीर के नाश होने पर भी यह आत्मा का नाश नहीं होता है गीता में भी कहा गया है –

नैनं छिदन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः

न चैन क्लेदयोन्त्यापो नं शोषयति मारूतः।।

इस प्रकार शस्त्र द्वारा अभेद्य आग के द्वारा अदाह्य

वायु के द्वारा सुखाया नहीं जा सकता क्योंकि यह अच्छेद्य अदाह्य अक्लेदय और अशोष्य है। अर्थात नित्य, शाश्वत, सर्वव्यापी अचल, स्थिर और सनातन है।

हन्ता चेन्मन्यते इन्तुहतश्चेन्मन्यते हतम्।

उभौ तो न विजानीतो नायइन्ति न हन्यते।।

गीता में भी यदि भाव कहा गया है। इसी तरह कठोपनिषद की संवाद शैली , सूक्ति सुधा की सुन्दर उक्तियों द्वारा नचिकेता ने भावनाओं के परिप्रेक्ष्य में कर्तव्यपरायणता सहजवत्सलता आदर्श युक्त सच्चरित्रता आदि अनेक योगक्षेम के प्रकारों के निरुपण करते हुए अपने पिता क मानसिक शान्ति के साथ साधन की मंगलमय भावना से ओतप्रोत होकर आत्मतत्व के उद्‌बोधन में स्तुत्य प्रयास किया है।

अतः उपनिषद् को ऐसा आध्यात्मिक मान सरोवर कहा जा सकता है जिससे ज्ञान की अनेक पुण्य सलिला प्रवाहित होती है जो इस पुण्य–भूमि में मानव मात्र को इहलौकिक और परलौकिक कल्याण के लिए प्रभावित करती है। इस ज्ञान की अमृत धारा को जो व्यक्ति सच्ची श्रद्धा लगन और विश्वास से आत्मसात कर ले वह उस आत्मज्ञान को प्राप्त कर मोक्ष रुपी आनन्द स्थल का स्वामी होगा।

xUFk lph

वैदिक साहित्य का इतिहास – बलदेव उपाध्याय
भारतीय धर्म और दर्शन – बलदेव उपाध्याय
उपनिषद्
गीता

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies